पाठ्यक्रम - १२

१२.अ संसार परिभ्रमण का मूल कारण - कषाय

आत्मा से पुद्गल कर्म चिपक जाते हैं और उदय में आने पर अनेक प्रकार से दु:ख देते हैं।

सामान्यत: कषाय चार प्रकार की है - (१) क्रोध कषाय, (२) मान कषाय, (२) माया कषाय, (२) लोभ कषाय

क्रोध कषाय -

अपने और पर के घात आदि करने रूप क्रूर परिणाम करने को क्रोध कहते है। गुस्सा, रोष, क्षोभ, आवेश आदि इसी के रूप है। क्रोध जलते हुए अंगारे की तरह है, जिसे दूसरे की तरफ फेंकने पर पहले अपना हाथ ही जल जाता हैं।

परम तपस्वी द्वीपायन मुनि क्रोध के कारण ही नरक गति गये। तुंकारी (जिसे कोई तू नहीं बोल सकता था) ने अनेक प्रकार के कष्ट भोगे। राजा अरविन्द क्रोध के कारण स्वयं अपनी तलवार के घात से मरण को प्राप्त हो नरक गया।

मान कषाय -

अहंकार, गर्व, घमण्ड करने को मान कषाय कहते हैं। ज्ञान, पूजा, कुल, धन रूपादि से दूसरों को तिरस्कृत करना, नीचा दिखाने का भाव रखना आदि मान के स्वरूप हैं।

मारीचि को अहंकार (मान कषाय) के कारण अनेक दुर्गतियों में भटकना पड़ा। रावण विद्याधर अहंकार के कारण मरकर नरक गया। दुर्गन्धा नाम की कन्या ने अनेक दु:ख भोगे।

माया कषाय -

दूसरों को ठगने के लिए जो कुटिलता या छल-कपट आदि किये जाते हैं। उसे माया कषाय कहते है। मायाचारी व्यक्ति के जप-तप, पूजा-विधान, व्रताचरण आदि सभी धार्मिक अनुष्ठान मोक्षमार्ग में अकार्यकारी/निष्फल है।

मायाचार के कारण की मृदुमति नामक मुनिराज हाथी की पर्याय को प्राप्त हुए। नारद महापुरुष नरकगामी हुआ।

लोभ कषाय-

धन-धान्यादि पर पदार्थों की प्राप्ति के लिए तीव्र आकांक्षा या गृद्धि लोभ कषाय है। लोभ से बड़ा कोई दूसरा अवगुण नहीं है इसे सब पापों का बाप कहा हैं। तृष्णा या लालच इसी के पर्यायवाची शब्द है।

एक और रत्नमयी बैल की चाह रखने वाला सेठ मरकर खजाने में सर्प हुआ फिर मरकर नरक गया। वेश्या ने ब्राह्मण को पाप का बाप कौन है ज्ञात कराया। क्रोधादि चारों कषायों के शक्ति, कार्य, स्थिती तथा सम्यक्त्वादि घातने की अपेक्षा चार-चार भेद कुल सोलह हो जाते हैं।

१. अनन्तानुबन्धी क्रोध	२. अनन्तानुबन्धी मान	३. अनन्तानुबन्धी माया	४. अनन्तानुबन्धी लोभ
५. अप्रत्याख्यान क्रोध	६. अप्रत्याख्यान मान	७. अप्रत्याख्यान माया	८. अप्रत्याख्यान लोभ
९. प्रत्याख्यान क्रोध	१०. प्रत्याख्यान मान	११. प्रत्याख्यान माया	१२. प्रत्याख्यान लोभ

उपरोक्त कषायों की शक्तियों के दृष्टान्तों को हम सारणी में समझने का प्रयास करें।

कषाय की अवस्था					
अनन्तानुबन्धी	क्रोध	मान	माया	लोभ	फल
अप्रत्याख्यान	शिला रेखा	शैल	बांस की जड़	किरमजी का रंग	नरक
प्रत्याख्यान	पृथ्वी रेखा	अस्थि	मेढ़े के सींग	अक्ष मल	तिर्यंच
संज्वलन	धूलि रेखा	बेंत	गोमूत्र	कीचड़	मनुष्य
	जल रेखा	लता	खुरपा	हल्दी	देव

जिंदगी तीन घण्टे की मूवी के समान नहीं है, थोड़ा सा तीसरा नेत्र खोलिये।

अनन्तानुबन्धी कषाय सम्यक्त्व व चारित्र दोनों का घात करती है, अप्रत्याख्यान कषाय देश संयम का तथा प्रत्याख्यान कषाय सकल संयम का घात करती हैं। संज्वलन कषाय यथाख्यात चारित्र का घात करती है अर्थात् यथाख्यात चारित्र नहीं होने देती।

उपरोक्त सोलह कषायों के अतिरिक्त नौ नो कषाय भी आगम में कही गई है। जिनके नाम क्रमशः हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद एवं नपुंसक वेद हैं।

हंसने को हास्य कहते हैं। मनोहर वस्तुओं में प्रीति होना रति है। अरति इससे विपरीत है। उपकार करने वाले से सम्बन्ध टूट जाने पर जो विकलता होती है वह शोक है। उद्वेग का नाम भय है। ग्लानि को जुगुप्सा कहते हैं। पुरुष में आकांक्षा उत्पन्न होना स्त्रीवेद है। स्त्री की आकांक्षा होना पुरुष वेद है। स्त्री पुरुष दोनों की अभिलाषा से सहित परिणाम नंपुसक वेद हैं।

जैन तत्त्व - विवेचन

तत्त्व शब्द भाववाची है, जो पदार्थ जिस रूप में है उसके उसी स्वरूप, भाव का होना ''तत्त्व'' कहलाता है जैसे जीव का चेतनपना, ज्ञान दर्शन स्वभाव, जल का शीतलपना आदि।

तत्त्व सात होते हैं - १. जीव तत्त्व, २. अजीव तत्त्व,
३. आस्रव तत्त्व, ४. बंध तत्त्व,
५. संवर तत्त्व, ६. निर्जरा तत्त्व, ७. मोक्ष तत्त्व।

इनमें से जीव का लक्षण चेतना है जो ज्ञानादिक के भेद से अनेक प्रकार की है। जीव से विपरीत लक्षण वाला अजीव है। शुभ और अशुभ कर्मों के आने के द्वार रूप आस्रव है। आत्मा और कर्म के प्रदेशों का परस्पर मिल जाना बन्ध है। आस्रव का रोकना संवर है। कर्मों का एकदेश अलग होना निर्जरा है और सब कर्मो का आत्मा से अलग हो जाना मोक्ष है।

सब फल जीव को मिलता है अतः प्रारम्भ में जीव को लिया गया है। अजीव जीव का उपकारी है यह दिखलाने के लिए जीव के बाद अजीव का कथन किया। आस्रव जीव और अजीव दोनों को विषय करता है अतः इन दोनों के बाद आस्रव का ग्रहण किया। बन्ध आस्रव पूर्वक होता है इसलिए आस्रव के बाद बन्ध का कथन किया। व्रत, गुप्ति आदि धारण करने वाले जीव में बन्ध नहीं होता अतः संवर बन्ध का उल्टा हुआ इस बात का ज्ञान कराने के लिए बन्ध के बाद संवर का कथन किया। संवर होने पर निर्जरा होती है इसलिए संवर के बाद निर्जरा कही। मोक्ष अन्त में प्राप्त होता है इसलिए उसका कथन अन्त में किया।

अथवा मोक्ष का प्रकरण होने से मोक्ष का कथन आवश्यक है वह संसार पूर्वक होता है और संसार के प्रधान कारण आस्रव और बन्ध है तथा मोक्ष के प्रधान कारण संवर और निर्जरा है।

इन सात तत्त्वों को एक उदाहरण के माध्यम से समझ लें। एक यात्री बस, जिसमें ड्राइवर (चलाने वाला) हो गया जीव, बस हो गई अजीव, यात्रियों का बस में प्रवेश करना आस्रव, सीट पर बैठ जाना बन्ध, दरवाजे का बंद हो जाना संवर मंजिल आने पर यात्रियों का क्रम क्रम से बाहर निकलना निर्जरा, अंत में ड्राइवर सहित विशेष की संज्ञा नहीं है अपितु पूर्ण रूप से कर्मों से रहित दशा का प्राप्त होना ही मोक्ष है।

भजन

अब सौंप दिया इस जीवन को, भगवान तुम्हारे चरणों में।
मैं हूँ शरणागत प्रभु तेरा रहे, ध्यान तुम्हारे चरणों में॥

मेरा निश्चय बस एक यही, मैं तुम चरणों का पुजारी बनूँ।
अर्पण कर दूँ दुनियां भर का सब प्यार तुम्हारे चरणों में॥
जो जग में रहूँ ऐसे रहूँ ज्यूं जल में कमल का फूल रहें।
है मन वच काया हृदय अर्पण भगवान तुम्हारे चरणों में॥

मैं निर्भय हूँ तुझ चरणों में आनन्द मंगल है जीवन में।
आतम अनुभव की सम्पति प्रभु मिल गई है तुम चरणों में॥
मेरी इच्छा है बस एक प्रभु इक बार तुझे मिल जाऊँ मैं।
इस सेवक की हर रग का हो तार तुम्हारे हाथों में॥

पाठ्यक्रम - १२

१२.ब चारित्र चक्रवर्ती आचार्य श्री शांतिसागर जी

दिगम्बर साधु सन्त परम्परा में वर्तमान युग में अनेक तपस्वी, ज्ञानी ध्यानी सन्त हुए। उनमें आचार्य शान्तिसागरजी महाराज एक ऐसे प्रमुख साधु श्रेष्ठ तपस्वी रत्न हुए हैं, जिनकी अगाध विद्वत्ता, कठोर तपश्चर्या, प्रगाढ़ धर्म श्रद्धा, आदर्श चारित्र और अनुपम त्याग ने धर्म की यथार्थ ज्योति प्रज्वलित की। आपने लुप्तप्राय, शिथिलाचारग्रस्त मुनि परम्परा का पुनरुद्धार कर उसे जीवन्त किया, यह निर्ग्रन्थ श्रमण परम्परा आपकी ही कृपा से अनवरत रूप से आज तक प्रवाहमान है।

जन्म - दक्षिण भारत के प्रसिद्ध नगर बेलगाँव जिला चिक्कोड़ी तालुका (तहसील) में भोजग्राम है। भोजग्राम के समीप लगभग चार मील की दूरी पर विद्यमान येलगुल गाँव में नाना के घर आषाढ़ कृष्णा 6, विक्रम संवत् 1929 सन् 1872 बुधवार की रात्रि में शुभ लक्षणों से युक्त बालक सातगौड़ा का जन्म हुआ था। गौड़ा शब्द भूमिपति-पाटिल का द्योतक है। पिता भीमगौड़ा और माता सत्यवती के आप तीसरे पुत्र थे इसी से मानो प्रकृति ने आपको रत्नत्रय और तृतीय रत्न सम्यक् चारित्र का अनुपम आराधक बनाया।

बचपन - सातगौड़ा बचपन से ही वैरागी थे। बच्चों के समान गन्दें खेलों में उनकी कोई रूचि नहीं थी। वे व्यर्थ की बात नहीं करते थे। पूछने पर संक्षेप में उत्तर देते थे। लौकिक आमोद-प्रमोद से सदा दूर रहते थे, धार्मिक उत्सवों में जाते थे। बाल्यकाल से ही वे शान्ति के सागर थे। छोटी सी उम्र में ही आपके दीक्षा लेने के परिणाम थे परन्तु माता-पिता ने आग्रह किया कि बेटा! जब तक हमारा जीवन है तब तक तुम दीक्षा न लेकर घर में धर्मसाधना करो। इसलिए आप घर में रहे।

व्यवसाय - मुनियों के प्रति उनकी अटूट भक्ति थी। वे अपने कन्धे पर बैठाकर मुनिराज को दूधगंगा तथा वेदगंगा नदियों के संगम के पार ले जाते थे। वे कपड़े की दुकान पर बैठते थे, तो ग्राहक आने पर उसी से कहते थे कि-कपड़ा लेना है तो मन से चुन लो, अपने हाथ से नाप कर फाड़ लो और बही में लिख दो। इस प्रकार उनकी निस्पृहता थी। आप कभी भी अपने खेतों में से पक्षियों को नहीं भगाते थे। बल्कि खेतों के पास पीने का पानी रखकर स्वयं पीठ करके बैठ जाते थे। फिर भी आपके खेतों में सबसे अधिक धान्य होता था। वे कुटुम्ब के झंझटों में नहीं पड़ते थे। उन्होंने माता-पिता की खूब सेवा की और उनका समाधिमरण कराया।

संयम पथ - माता-पिता के स्वर्गस्थ होते ही आप गृह विरत हो गये एवं मुनिश्री देवप्पा स्वामी से 41 वर्ष की आयु में कर्नाटक के उत्तूर ग्राम में ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी सन् 1913 को क्षुल्लक के व्रत अंगीकार किए। आपका नाम शांतिसागर रखा गया। क्षुल्लक अवस्था में आपको कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ा था, क्योंकि तब मुनिचर्या शिथिलताओं से परिपूर्ण थी। साधु आहार के लिए उपाध्याय द्वारा पूर्व निश्चित गृह में जाते थे। मार्ग में एक चादर लपेट कर जाते थे आहार के समय उस वस्त्र को अलग कर देते थे आहार के समय घण्टा बजता रहता था जिससे कोई विघ्न न आए।

महाराज ने इस प्रक्रिया को नहीं अपनाया और आगम की आज्ञानुसार चर्या पर निकलना प्रारम्भ किया। गृहस्थों को पड़गाहन की विधि ज्ञात न होने से वे वापस मंदिर में आकर विराज जाते इस प्रकार निराहार 4 दिन व्यतीत होने पर ग्राम में तहलका मच गया तथा ग्राम के प्रमुख पाटील ने कठोर शब्दों में उपाध्याय को कहा-शास्त्रोक्त विधि क्यों नहीं बताते ? क्या साधु को निराहार भूखा मार दोगे! तब उपाध्याय ने आगमोक्त विधि बतलाई एवं पड़गाहन हुआ।

नेमिनाथ भगवान के निर्माण स्थान गिरनार जी की वंदना के पश्चात् इसकी स्थायी स्मृति रूप अपने ऐलक दीक्षा ग्रहण की ऐलक रूप में आपने नसलापुर में चातुर्मास किया वहाँ से चलकर ऐनापुर ग्राम में रहे। उस समय यरनाल में पञ्चकल्याणक महोत्सव (सन् 1920) होने वाला था वहाँ जिनेन्द्र भगवान के दीक्षा कल्याणक दिवस पर आपने अपने गुरुदेव देवेन्द्रकीर्ति जी से मुनिदीक्षा ग्रहण की। समडोली में नेमिसागर जी की ऐलक दीक्षा व वीरसागर जी की मुनि दीक्षा के अवसर पर समस्त संघ ने महाराज को आचार्य पद (सन् 1924) से अलंकृत कर अपने आप को कृतार्थ किया। गजपंथा में चातुर्मास के बाद सन् (1934)

पञ्चकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हुआ। इस अवसर पर उपस्थित धार्मिक संघ ने महाराज को चारित्र चक्रवर्ती पद से अलंकृत किया।

सल्लेखना - जीवन पर्यन्त मुनिचर्या का निर्दोष पालन करते हुए 84 वर्ष की आयु में दृष्टि मंद होने के कारण सल्लेखना की भावना से आचार्य श्री सिद्धक्षेत्र कुंथलगिरी जी पहुँचे। वहाँ पर उन्होंने 13 जून को विशाल धर्मसभा के मध्य आपने सल्लेखना धारण करने के विचारों को अभिव्यक्त किया। 15 अगस्त को महाराज ने आठ दिन की नियम-सल्लेखना का व्रत लिया जिसमें केवल पानी लेने की छूट रखी। 17 अगस्त को उन्होंने यम सल्लेखना या समाधिमरण की घोषणा की तथा 24 अगस्त को अपना आचार्य पद अपने प्रमुख शिष्य श्री १०८ वीरसागर जी महाराज को प्रदान कर घोषणा पत्र लिखवाकर जयपुर (जहाँ मुनिराज विराजमान थे) पहुँचाया। आचार्य श्री ने ३६ दिन की सल्लेखना में केवल १२ दिन जल ग्रहण किया।

१८ सितम्बर १९५५ को प्रात: ६.५० पर ॐ सिद्धोऽहं का ध्यान करते हुए युगप्रवर्तक आचार्य श्री शान्तिसागर जी ने नश्वर देह का त्याग कर दिया। संयम-पथ पर कदम रखते ही आपके जीवन में अनेक उपसर्ग आये जिन्हें समता पूर्वक सहन करते हुए आपने शान्तिसागर नाम को सार्थक किया।

कुछ उपसर्गों एवं परीषहों की संक्षिप्त झलकियाँ इस प्रकार हैं -

1. क्षुल्लक दशा मे कोगनोली के मंदिर में ध्यानस्थ शान्तिसागर जी के शरीर से विशाल विषधर लिपट गया। बहुत देर तक क्रीड़ा करने के पश्चात् शांत भाव से वापस चला गया।

2. मध्याह्न का समय था कोन्नूर की गुफा में महाराज सामायिक कर रहे थे एक उड़ने वाला सर्प आया और महाराज की जंघाओं के बीच छिप गया। वह लगभग तीन घंटे तक उपद्रव करता रहा। लेकिन आचार्य श्री ने अपनी स्थिर मुद्रा को भंग नहीं किया।

3. द्रोणगिरी के पर्वत पर रात्रि में महाराज जब ध्यान करने बैठे तभी एक सिंह आ गया वह प्रात: लगभग 8-9 बजे तक महाराज के सामने ही बैठा रहा। इस प्रकार मुक्तागिरी पर्वत पर भी जब महाराज ध्यान में रहते थे, शेर झरने पर पानी पीने आ जाता था। आचार्यश्री का कहना था कि भय किस बात का ? यदि वह पूर्व का बैरी न हो और हमारी ओर से कोई बाधा या आक्रमण न हो तो वह क्यों आक्रमण करेगा ? बिना किसी भय के आत्मलीन रहते थे।

4. कोन्नूर के जंगल में महाराज धूप में बैठकर सामायिक कर रहे थे, इतने में एक बड़ा सा कीड़ा उनके पास आया और उनके पुरुष चिह्न से चिपट कर वहाँ का रक्त-चूसने लगता है। खून बहने लगा किन्तु महाराज डेढ़ घण्टे तक अविचल ध्यान में बैठे रहे।

5. जंगल के मंदिर में ध्यान करते वक्त असंख्य चीटियाँ उनके शरीर पर चढ़ गई एवं देह के कोमल अंग-उपांग को एक-दो घंटे ही नहीं सारी रात खाती रहीं तब वे महापुरुष साम्य भाव से परीषह सहन करते रहे।

6. एक अविवेकी श्रावक जो कपड़े से गर्म दूध का बर्तन पकड़े हुए था उसने वह उबलता दूध महाराज की अंजुलि में डाल दिया। उष्णता की असह्य पीड़ा से महाराज की अंजुलि छूट गई और वे नीचे बैठ गये, किन्तु उनकी मुख मुद्रा पर क्रोध की एक रेखा तक नहीं उभरी।

7. श्रावक की अज्ञानता के कारण नौ दिन तक पर्याप्त जल नहीं मिला। जिसके कारण उनकी छाती पर फफोले पड़ गए पर वे गंभीर और शांत बने रहे। दसवें दिन मात्र जल लेकर ही बैठ गए। दस-बारह वर्ष तक महाराज दूध और चावल ही मात्र लेते रहे। एक दिन किसी श्रावक ने पूछा-महाराज आप और कुछ आहार में क्यों नहीं लेते, तब महाराज बोले-जो आप देते हैं वही मैं लेता हूँ। दूसरे दिन श्रावकों ने दाल रोटी आदि सामग्री देनी चाही तो भी महाराज ने नहीं ली। पुन: पूछने पर बताया कि आटा, मसाला कब पिसा हुआ था ? रात्रि में पिसा हुआ अन्न रात्रि भोजन के दोष का कारण बनता है। अत: पुन: मर्यादित भोजन प्राप्त होने पर ग्रहण करने लगे। आचार्य श्री ने गृहस्थ अवस्था में ही 38 वर्ष की आयु में घी-तेल का आजीवन त्याग कर दिया था, उनके नमक, शक्कर, छाछ आदि का भी त्याग था तथा उन्होंने 35 वर्ष के मुनि जीवन में 27 वर्ष 3 माह 23 दिन (9938) तक उपवास धारण किये।

8. बम्बई सरकार ने हरिजनों के उद्धार के लिए एक हरिजन मंदिर प्रवेश कानून सन् 1947 में बनाया। जिसके बल पर हरिजनों को जबरदस्ती जैन मंदिरों में प्रवेश कराया जाने लगा। जब आचार्य श्री को यह समाचार ज्ञात हुआ तो उन्होंने इसे जैन संस्कृति, जैन धर्म पर आया उपसर्ग जानकर, जब तक यह उपसर्ग दूर नहीं होगा तब तक के लिए अन्नाहार का त्याग कर दिया। आचार्य

श्री की श्रद्धा एवं त्याग के परिणाम स्वरूप लगभग तीन वर्ष पश्चात् इस कानून को हटा दिया गया। तभी आचार्य श्री ने 1105 दिन के बाद 16 अगस्त 1951 रक्षाबन्धन के दिन अन्नाहार को ग्रहण किया।

9. दिल्ली में दिगम्बर मुनियों के उन्मुक्त विहार की सरकारी आज्ञा नहीं थी। अत: 10-20 आदमी हमेशा महाराज के विहार के वक्त साथ ही रहते थे। आचार्य महाराज को चतुर्मास के दो माह व्यतीत होने पर जब यह बात ज्ञात हुई तो महाराज ने स्वयं एक फोटोग्राफर को बुलवाया और ज्ञात समय के पूर्व अकेले ही शहर में निकल गये तथा जामामस्जिद, लालकिला, इंडिया गेट, संसद भवन आदि प्रमुख स्थानों पर खड़े होकर उन्होंने अपना फोटो खिचवाया। समाज में अपवाद होने लगा कि महाराज को फोटो खिचवाने का शौक है। इस विषय में महाराज से पूछे जाने पर उन्होंने ने कहा-हमारे शरीर की स्थिति तो जीर्ण अधजले काठ के समान है इसके चित्र की हमें क्या आवश्यकता और वह चित्र हम कहाँ रखेंगे। श्रावकों का कर्त्तव्य है कि इन चित्रों को सम्हाल कर रखें जिससे भविष्य में मुनि विहार की स्वतंत्रता का प्रमाण सिद्ध हो सके। हमारे इस उद्योग से सभी दिगम्बर जैन मुनियों में साहस आवेगा, दिगम्बर जैनधर्म की प्रभावना होगी। हमारे ऊपर उपसर्ग भी आए तो हमें कोई चिन्ता नहीं। अच्छे कार्य करते हुए भी यदि अपवाद आये तो उसे सहना मुनि धर्म है न कि उसका प्रतिवाद करना।

१०. आगम ग्रन्थों की सुरक्षा को दृष्टि में रखते हुए आचार्य श्री के आशीर्वाद एवं प्रेरणा से सिद्धान्त ग्रन्थों को ताम्रपत्र पर उत्कीर्ण कराया गया। अनेकों भव्य आत्माओं ने आचार्य श्री से व्रत-संयम ग्रहण कर अपने जीवन का उद्धार किया।

बड़ों की शिक्षा और एकता

एक दिन की बात है पक्षियों का पूरा परिवार बैठा था। तभी वह देखता है कि यहाँ तो जाल बिछा हुआ है अब बचना मुश्किल है, तब सभी वृद्ध (दादाजी) पक्षी से कहते हैं कि अब इससे बचने का कोई उपाय बताओ। तब वह वृद्ध पक्षी बोला मैंने तुम्हें पहले भी कहा था कि आप लोग अपनी सुरक्षा के लिए कुछ सोचा करो तब आप लोगों ने मेरी बात नहीं मानी और कहते थे कि हम जवान हैं, शक्तिशाली हैं हमारी चिन्ता मत करो। अब बताओ अपनी शक्ति। पक्षी बोले दादाजी हमें माफ कर दो और बचने का कोई उपाय बताओ। दादाजी कहते हैं ठीक है सोचता हूँ। समय निकलता गया रात हो गई पक्षी बोले दादाजी नींद नहीं आ रही है, आपने कुछ सोचा या नहीं, दादाजी बोले शोर-गुल मत करो, मुझे शान्ति से एकान्त में सोचने दो। जल्दी-जल्दी नहीं सोचा जा सकता - जिस प्रकार डॉक्टर मरीज को शान्ति से गम्भीरता के साथ एकान्त में देखता है, ऐसा नहीं करता कि परिवार वाले कहें कि इतना पैसा ले लो और जल्दी-जल्दी देख लो और ठीक कर दो। किन्तु डॉक्टर साहब तो अपने अनुसार शान्ति से देखते हैं, इसलिए आप भी सब मुझे सोचने दो।

थोड़ी देर बात दादाजी कहते हैं कि एक युक्ति सोची है। उसका प्रयोग सबको मिलकर करना है वैसे शरीर तो पर के आश्रित है फिर भी बुद्धि का प्रयोग करोगे तब बच सकते हो। क्योंकि वह शिकारी प्रात: निश्चित रूप से आएगा और वह सबको जिन्दा झोली में भरकर ले जाएगा। अब आप पचासों को क्या करना है यह मैं बतलाता हूँ। वह शिकारी किसी को भी पहले जाल से निकाल कर झोली में रख सकता है उस समय आपको मृत जैसा आचरण करना है जिससे वह समझेगा कि यह तो मरा हुआ है वह झोली में न रखकर नीचे रख देगा, वह एक-एक करके सबको निकालेगा आप लोग मन में गिनते रहना जैसे ही वह अन्तिम साथी को निकाले और पचास की गिनती बोले सब एक साथ उड़ जाना। प्रात: काल शिकारी आता है और एक साथ पचास पक्षी को देख प्रसन्न हो जाता है, वह एक को जाल से निकालता है और देखता है कि यह तो मर गया वह नीचे रख देता है, एक-एक करके सभी को देखता है सभी को मृत समझ नीचे रख देता है, अन्तिम पक्षी को जैसे ही रखता है वैसे ही वे दादाजी के सिखाए अनुसार एक साथ उड़ जाते हैं। इस प्रकार दादाजी की बुद्धि एवं सब पक्षियों की एकता के कारण सबके प्राण बच गए। अत: वृद्धों के अनुभव एवं गुरुओं के वचन कार्यकारी होते हैं।

शिक्षा- अपने नायक की आज्ञा मानना चाहिए एवं आपस में एकता रखनी चाहिए।

सिरितिथ्यर भत्ती (आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी)

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थ-यरे केवली अणंतजिणे।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ॥ 1॥
अर्थ : (**जिणवरे**) जो कर्मरूपी शत्रुओं को जीतने में श्रेष्ठ (**केवली**) केवलज्ञान से युक्त (**अणंतजिणे**) अनन्तसंसार को जीतने वाले (**णर-पवर-लोय महिए**) मनुष्यों में श्रेष्ठ चक्रवर्ती आदि लोगों से पूजित (**विहुय-रय-मले**) ज्ञानावरण-दर्शनावरणरूपी रज और मोहनीय-अन्तरायरूपी मल को दूर करने वाले तथा (**महप्पण्णे**) महाप्राज्ञ-उत्कृष्ट ज्ञानवान् ऐसे (**तित्थ-यरे**) तीर्थङ्करों की (**हं थोस्सामि**) मैं स्तुति करता हूँ।
लोयस्सुज्जोय-यरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ॥ 2॥
अर्थ : (**लोयस्सुज्जोय-यरे**) केवलज्ञान के द्वारा लोक को प्रकाशित करने वाले (**धम्मं तित्थंकरे**) धर्मरूपी तीर्थ के कर्ता (**जिणे**) जिनेन्द्र प्रभु की मैं (**वंदे**) वन्दना करता हूँ (**च**) और (**अरहंते**) अरहंत पद को प्राप्त (**केवलिणो**) केवलज्ञानी (**चउवीसं**) चौबीस तीर्थङ्करों का (**एव**) निश्चित ही (**कित्तिस्से**) कीर्तन/गुण स्तवन करता हूँ।
उसह-मजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ 3॥
अर्थ : मैं कुंदकुदाचार्य (**उसहं**) ऋषभदेव (**अजियं**) अजितनाथ (**संभवं**) शंभवनाथ (**अभिणंदणं**) अभिनंदननाथ (**च**) और (**सुमइं**) सुमतिनाथ की (**वंदे**) वंदना करता हूँ (**च**) और (**पउमप्पहं**) पद्मप्रभ देव (**सुपासं**) सुपार्श्वनाथ (**च**) और (**चंदप्पहं**) चन्द्रप्रभ देव (**जिणं**) जिनेन्द्र की (**वंदे**) वंदना करता हूँ।
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं भयवं, धम्मं संतिं च वंदामि ॥ 4॥
अर्थ : (**च**) और मैं (**सुविहिं**) सुविधि/सौभाग्यशाली (**पुप्फयंतं**) पुष्पदंत (**सीयल**) शीतलनाथ (**सेयं**) श्रेयोनाथ (**च**) और (**वासुपुज्जं**) वासुपूज्य (**विमलं**) विमलनाथ (**अणंतं**) अनंतनाथ (**धम्मं**) धर्मनाथ (**च**) और (**संतिं**) शान्तिनाथ (**भयवं**) भगवान की (**वंदामि**) वंदना करता हूँ।
कुंथुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामि रिट्ठणेमिं (वंदे अरिट्ठणेमिं), तह पासं वड्ढमाणं च॥ 5॥
अर्थ : मैं (**कुंथुं**) कुंथुनाथ (**अरं**) अरनाथ (**मल्लिं**) मल्लिनाथ (**सुव्वयं**) मुनिसुव्रतनाथ (**णमिं**) नमिनाथ (**अरिट्ठ-णेमिं**) अरिष्ट नेमिनाथ (**तह**) तथा (**पासं**) पार्श्वनाथ (**च**) और (**वड्ढमाणं**) वर्धमानस्वामी (**जिणवरिंद**) जिनवरों में प्रधान तीर्थङ्करों को (**वंदे**) नमस्कार करता हूँ।
एवं मए अभित्थुआ, विहुयरय-मला पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा, तित्थ-यरा में पसीयंतु॥ 6॥
अर्थ : (**एवं**) इस प्रकार (**मए**) मेरे द्वारा (**अभित्थुआ**) स्तुति किए गए (**विहुय-रय-मला**) ज्ञानावरण-दर्शनावरणरूपी रज व मोहनीय-अन्तराय-रूपी मल को दूर करने वाले (**पहीण-जर-मरणा**) बुढ़ापा और मृत्यु से रहित जिणवरा गणधर आदि जिनवरों में प्रधान ऐसे (**चउवीसं**) चौबीस (**तित्थ-यरा**) तीर्थङ्कर भगवान (**मे**) मेरे ऊपर (**पसीयंतु**) प्रसन्न हों।
कित्तिय वंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ॥ 7॥
अर्थ : इस प्रकार मेरे (**कित्तिय**) वचन से कीर्तन किए गए (**वंदिय**) मन से वंदना किए गए तथा (**महिया**) काय से पूजे गए (**एदे**) ये (**लोगोत्तमा**) लोक में उत्तम (**जिणा**) जिनवर अरहंत और (**सिद्धा**) सिद्धि को प्राप्त सिद्ध (मे) मेरे लिए (**आरोग्ग-णाणलाहं**) निरोगता और ज्ञान लाभ (**समाहिं**) समाधि (**च**) और (**बोहिं**) बोधि/रत्नत्रय को (**दिंतु**) देवें।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पयासंता।
सायरमिव गम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ 8॥
अर्थ : जो (**चंदेहिं**) चन्द्रमा से (**णिम्मलयरा**) अधिक निर्मल/निर्मलताकारी (**आइच्चेहिं**) सूर्य से (**अहिय-पयासंता**) अधिक प्रभासम्पन्न/प्रकाशमान (**सायरं इव**) सागर के समान (**गंभीरा**) गम्भीर तथा (**सिद्धा**) सिद्ध पद को प्राप्त ऐसे चौबीस भगवान (**मम**) मुझे (**सिद्धिं**) सिद्धि/मोक्ष को (**दिसंतु**) देवें।

कर्म एक थर्मामीटर शरीर में बुखार होता है या थर्मामीटर में ? यद्यपि बुखार तो शरीर में होता है, थर्मामीटर तो बुखार को बताने का माध्यम है, निमित्त है कि १०३ डिग्री बुखार है या १०४ डिग्री। ठीक इसी प्रकार संक्लेश परिणाम तो आत्मा के होते हैं। उन परिणामों को कर्म रूपी थर्मामीटर से नापा जाता है। जैसे परिणामों में तीव्र संक्लेशता की गर्मी होती है तो कर्म का पारा ऊपर चढ़ जाता है और विशुद्ध परिणाम होने से कर्म का पारा नीचे उतर जाता है। अगर स्वस्थ हो जाता है तो पारा समाप्त हो जाता है।

चौबीस तीर्थंकर स्तवन

आदिम तीर्थंकर प्रभो, आदिनाथ मुनिनाथ।
आधि व्याधि अघ मद मिटे, तुम पद में मम माथ।।
शरण चरण हैं आपके, तारण तरण जहाज।
भवदधि तट तक ले चलो, करुणाकर जिनराज।।१।।
जित-इन्द्रिय जित-मद बने, जित-भवविजित-कषाय।
अजित-नाथ को नित नमूँ, अर्जित दुरित पलाय।।
कोंपल पल-पल को पले, वन में ऋतु-पति आय।
पुलकित मम जीवन-लता, मन में जिन पद पाय।।२।।
तुम-पद-पंकज से प्रभो, झर-झर-झरी पराग।
जब तक शिव-सुख ना मिले, पीऊँ षट्पद जाग।।
भव-भव, भव-वन भ्रमित हो, भ्रमता-भ्रमता आज।
संभव-जिन भव शिव मिले, पूर्ण हुआ मम काज।।३।।
विषयों को विष लख तजूँ, बनकर विषयातीत।
विषय बना ऋषि ईश को, गाऊँ उनका गीत।।
गुण धारे पर मद नहीं, मृदुतम हो नवनीत।
अभिनन्दन जिन! नित नमूँ, मुनि बन मैं भवभीत।।४।।
सुमितनाथ प्रभु सुमति हो, मम मति है अति मंद।
बोध कली खुल-खिल उठे, महक उठे मकरन्द।।
तुम जिन मेघ मयूर मैं, गरजो बरसो नाथ।
चिर प्रतीक्षित हूँ खड़ा, ऊपर करके माथ।।५।।
शुभ्र-सरल तुम, बाल तव, कुटिल कृष्ण-तम नाग।
तव चिति चित्रित ज्ञेय से, किन्तु न उसमें दाग।।
विराग पद्मप्रभ आपके, दोनों पाद-सराग।
रागी मम मन जा वहीं, पीता तभी पराग।।६।।
अबंध भाते काटके, वसु विध विधिका बंध।
सुपार्श्व प्रभु निज प्रभु-पना, पा पाये आनन्द।।
बांध-बांध विधि-बंध मैं, अन्ध बना मति-मन्द।
ऐसा बल दो अंध को, बंधन तोड़ूँ द्वन्द।।७।।
चन्द्र कलंकित, किन्तु हो, चन्द्र प्रभ अकलंक।
वह तो शंकित केतु से, शंकर तुम निःशंक।।
रंक बना हूँ मम अतः, मेटो मनका पंक।
जाप जपूँ जिन-नाम का, बैठ सदा पर्यंक।।८।।
सुविधि! सुविधि के पूर हो, विधि से हो अति दूर।
मम मन से मत दूर हो, विनती हो मंजूर।।
बाल मात्र भी ज्ञान ना, मुझमें मैं मुनि-बाल।
वबाल भव का मम मिटे, प्रभु-पद में मम भाल।।९।।
शीतल चन्दन है नहीं, शीतल हिम ना नीर।
शीतल जिन! तव मत रहा, शीतल हरता पीर।।
सुचिर काल से मैं रहा, मोह-नींद से सुप्त।
मुझे जगा कर, कर कृपा, प्रभो करो परितृप्त।।१०।।
अनेकान्त की कान्ति से, हटा तिमिर एकान्त।
नितान्त हर्षित कर दिया, क्लान्त विश्व को शान्त।।
निःश्रेयस सुख-धाम हो, हे जिनवर श्रेयांस।
तव थुति अविरल मैं करूँ, जब लौं घट में श्वास।।११।।
वसुविध मंगल द्रव्य ले, जिन पूजो सागार।
पाप-घटे फलतः फले, पावन पुण्य अपार।।
बिना द्रव्य शुचि भाव से, जिन पूजों मुनि लोग।
बिन निज शुभ उपयोग के, शुद्ध न हो उपयोग।।१२।।

मन्त्र की शक्ति

स्वामी विवेकानन्द अमेरिका में विद्वानों की एक सभा में मन्त्र की शक्ति के बारे में प्रवचन कर रहे थे। उन्होंने जैसे ही मन्त्रों के द्वारा घटित होने वाले परिवर्तनों के बारे में बताना शुरू किया कि एक मशहूर विद्वान व्यक्ति खड़ा होकर स्वामीजी की बात का प्रतिवाद करने लगा। स्वामीजी आप हमें मूर्ख बना रहे हैं। शब्दों के संयोजन से ही मन्त्र बनते हैं और शब्दों से बड़े परिवर्तन तो दूर की बात है, मन्त्र से पेड़ का एक पत्ता भी नहीं हिल सकता है। यह सुनकर विवेकानन्द ने उस व्यक्ति को डाँटते हुए कहा- ''तुम तो गधे हो।'' यह कहना था कि वह विद्वान व्यक्ति गुस्से में उबल पड़ा, उसकी आँखें लाल हो गई व गुस्से के कारण काँपने लगा।

विवेकानन्द ने मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा- क्यों महाशय क्या हुआ ? मैंने तो आपको केवल 'गधा' कहा था। केवल एक साधारण शब्द से आप में इतना परिवर्तन कैसे घटित हो गया। आप काँप क्यों रहे हैं। जब साधारण शब्द के उच्चारण से आप में इतना परिवर्तन हो गया, फिर मन्त्र तो शब्द के शक्तिशाली संयोजन होते हैं, उनसे कुछ भी घटित हो सकता है। तब विद्वान को समझ में आया।

अभ्यास

अ. प्रश्नों के उत्तर लिखिए।

१. उत्सर्पिणि अवसर्पिणि काल का स्वरूप, प्रमाण एवं व्यवस्था बताइये ?

२. सुषमा दुषमा काल में वृद्धि का क्रम, शरीर की विशेषताएं बताएं ?

३. दुषमा – दुषमा काल की विशेषताएं बताइये ?

४. चार प्रकार के आहार कौन-कौन से हैं ?

५. रात्रि में भोजन करने से क्या हानि है ?

६. जल गालन क्यों अनिवार्य है ?

७. आचार्य कुन्द-कुन्द स्वामी का संक्षिप्त परिचय लिखें ?

८. राजकुमार के मित्रों ने उसके साथ कैंसा व्यवहार किया था ?

९. द्रव्य किसे कहते हैं उसके भेद लिखें ?

१०. द्रव्यों के प्रदेश एवं संख्या कितनी है ?

११. छह लेश्याओं का उदाहरण क्या है ?

१२. श्रुत पंचमी पर्व क्यों और कब मनाया जाता है ?

१३. रक्षा बंधन पर्व की संक्षिप्त कथा बताएं ?

१४. दीपावली में पूजा कब, कैसे करनी चाहिए ?

१५. कषायों के २५ भेद कौन-कौन से हैं ?

१६. माया कषाय किसे कहते हैं ?

१७. सात तत्वों को जीवादि क्रम में क्यों रखा गया ?

१८. आ. शांति सागर जी ने सल्लेखना कब कहां धारण की थी ?

ब. श्लोक एवं छंदों को पूर्ण करें -

१. श्री सर्वज्ञ ..... विनासिनी।

२. सोच ..... नहीं।

३. अक्षय है ..... विनाशी है।

४. उत्तमा ..... धमा धमा ।

५. कित्तिय ..... में बोधि।

६. शीतल ..... परितृप्त ।

स. अर्थ लिखिए।

श्लोक नं. ८ पृ. ७७

श्लोक नं. ९ पृ. ८७

श्लोक नं. ६ पृ. ९४

आप मिनटों का ध्यान रखें
घण्टे अपना ध्यान स्वयं रख लेंगे।

द. सही उत्तर चुनकर सामने लिखें -

६००० धनुष, एक पूर्व कोटी, ६ घण्टे, २४ घण्टे, रेल पटरी, वृक्ष, स्नेह भाव, क्रोधी, कीचड़, हल्दी

१. उबला पानी .....

२. धर्म द्रव्य .....

३. सुषमा सुषमा .....

४. कृष्ण लेश्या .....

५. अधर्म द्रव्य .....

६. संज्वलन लोभ .....

७. धर्म द्रव्य .....

८. दुषमा सुषमा.....

९. शुक्ल लेश्या .....

१०. अप्रत्याख्यान क्रोध.....

स. अन्यत्र ग्रंथ से खोजें ज्ञान, बढ़ाऐं, पढ़ें और पढ़ायें।

१. भोग भूमि कैसी होती है वहां का वातावरण कैसा होता है ?

२. हुण्डा अवसर्पिणी किसे कहते है उनमें घटने वाली दस अद्भुत बातें कौन-कौन सी हैं ?

३. पंचमकाल का दुष्प्रभाव बताइए ?

४. सृष्टि का प्रलय एवं उत्थान कैसे होता है ?

५. मूर्त अमूर्त किसे कहे हैं कौन-कौन से द्रव्य मूर्त व अमूर्त हैं ?

६. क्रोधी व्यक्ति की कैसी अवस्था होती है ?

७. द्वीपायन मुनि की कथा कैसी है ?

८. मृदुमति मुनिराज की कथा कैसी है ?

९. क्रोधादि कषायों का संस्कारकाल कितना है ?

१०. हाँस्यादि नो कषाय का बंध किन कारणों से होता है ?

११. द्रव्य, तत्व, पदार्थ एवं अस्तिकाय में क्या अंतर है ?